जोहानेसबर्ग, दक्षिण अफ्रीका
अक्टूबर २५, २००३

सन्देश संख्या ६१
क्या हैं सद्गुरू?

सद्गुरू एक प्रक्रिया, एक अस्तित्व हैं । वह न तो एक व्यक्तित्व हैं और न ही अहंकार एवं मिथ्याभिमान के विकार । वे ऐसी कहानियाँ नहीं बताते हैं कि किस प्रकार उनके बाल्यावस्था में उनकी विशिष्टता और अन्तःशक्ति महान् लोगों द्वारा देखी तथा घोषित की गयी, किस प्रकार उनकी शुचिता और पवित्रता उन लोगों द्वारा स्वीकार की गयी जो कि प्रभावशाली पदों तथा वैभव में है। सद्गुरू यह प्रचार नहीं करते है की उनकी 'दिव्यता' से अभिभूत होकर उनके माता–पिता भी उनके समक्ष नतमस्तक हुए तथा उनसे दीक्षा प्राप्त किए। सद्गुरू के लिए दुकानी सजावटों जैसे कि विशेष वस्त्रों, बिल्लों, शीर्ष–परिधानों, केश–विन्यास अथवा केश–मुण्डन, मस्तक या नासिका पर विशेष चिन्हों, दाढी की विविध लम्बाईयों, गद्दी की मोहकता, पालकी एवं छत्र परिरूपों की आवश्यकता नहीं है।

सद्गुरू व्यक्तियों के सामञ्जस्यपूर्ण जीवन का आग्रह करते हैं जिसका अभिप्राय है समस्त व्यतिक्रम और असामञ्जस्य का अन्त; न की अपने जागीर की सेवा के लिये आदेश पालन करने वाले व्यक्तियों की। सद्गुरू आपके मिथ्या ''अहंभाव'' का नाश कर देते हैं और इस प्रकार आपके यथार्थ स्वरूप का पुनर्बोध करा देते हैं। किसी मनस्तात्विक अवशेष या तलछट के बिना शुद्ध आनन्द के संकेन्द्रण हेतु आपके अशुद्ध अहंकेन्द्र को मिटाने के लिये सद्गुरू आपको प्रोत्साहित करते हैं। किन्तु आप अपने 'अहंभाव' के मिट जाने से भयभीत हैं और इस तरह फालतू गुरूओं की चक्करमें फँस जाते हैं जो आपको आपकी गतिविधियों तथा मानसिक कूडे–कचरे में प्रसन्न रखते हैं तथा आपके शरीर (जीवन) की कोशिकाओं के भीतर भगवत्ता को दुर्दशा के गर्त में छोड देते हैं। क्षुद्रगुरू और की तुच्छ दौड में लगे हुए हैं जब कि सद्गुरू अन्तर्निहित संगीत में समाये रहते हैं। किसी धर्मग्रन्थ तथा इसकी बौद्धिक व्याख्याओं को पढ़ने के पूर्व सद्गुरू आभ्यन्तरिक पुस्तक तथा अन्तर्दृष्टि का पाठ करते हैं। व्याख्याकार विश्वासघाती है, वह स्वयं तथा दूसरों को धोखा देता है; वह यह अनुभव नहीं करता है की वह ''पावन विचारों'' के आवरण में मानसिक प्रदुषण फैला रहा है।

सद्गुरू जानते हैं की मन–अहंकार की संरचना के विविध मापदण्डों एवं संरक्षी यन्त्र–रचना के अनुकरण तथा विरोधाभासों के विखण्डन, जालसाजी व मोह में पलायन के लिए ऊर्जा के अपचय की अपेक्षा मन–अहंकार के उत्पत्ति स्थल जो की लालसाओं, भय एवं निर्भरता का ढाँचा है, के अवलोकन हेतु ऊर्जा का संचय ही यथार्थ धार्मिक चेतना है। सद्गुरू बनावटीपन और बन्धन के प्रपंच से उत्पन्न मनस्तात्विक काल का परिहार कर देते हैं और इस प्रकार द्वंद्वों, व्याघातों और विरोधों से मुक्त रहते हैं। मनस्तात्विक काल से मुक्ति ही हमें काल के एक अभिनव आयाम की ओर ले जाती है जो की कालानुक्रम तथा जैविक काल से भी परे है। कदाचित् यही है कालातीत, परम प्रबोध एवं समाधि की एक अवस्था (जो कि पूर्ण और सहज सचेतनता है न कि मूर्छा) जिसमें दैनंदिन कार्य व्यवहार भी सम्भव हो सकता है। सद्गुरू कोई उपदेश नहीं देते हैं न ही आपको आपके पाप और भोलेपन में उलझाये रखने के लिये कोई नैतिक आज्ञा–पत्र जारी करते हैं। बल्कि वह अवधारणाओं एवं निष्कर्षों से मुक्त बोध और करूणा का उपहार प्रदान करते हैं।

'सत्' का अभिप्राय है 'अच्छा'। सद्गुरू यानी एक अच्छा गुरू पाने के लिये आपको भी एक अच्छा शिष्य (सत् शिष्य) होना अनिवार्य है जिसका अर्थ है ऐसा शिष्य जो कि चाहने–पाने की प्रक्रिया तथा जाल में ङ्गँस जायेंगे जो हैं आपके लोभ और तुी की खोज, आपके भय और नैराश्य का इस्तेमाल आपका शोषण करने, आपको ङ्गँसाने, आपको अपने सम्प्रदाय में दर्ज करने तथा अपकी मगजधुलाई करने के लिये करेंगे। ऐसे गुरू आपको पुरस्कार का प्रलोभन देंगे अथवा दण्ड की चेतावनी देंगे। अनेक प्रकार की प्रतिज्ञायें और धमकियाँ जारी करेंगे जो कुछ भी नहीं बल्कि मनके मूलभूत उपादान जैसे लोभ और भय हैं। सद्गुरू के सन्देश वे नहीं बल्कि आप हैं। वे आपको आत्मनिरीक्षण–परिक्षण करने के लिये प्रोत्साहित करते हैं ताकि आपके वासनारहित अवलोकन की प्रचण्ड ज्वाला में आपके लोभ एवं भय भस्मीभूत हो जायें। तब आप अपने लिये स्वयंज्योति हो जाते हैं और गुरूपर निर्भर नहीं रह जाते हैं। तब तो आपके लिये सदैव दिवाली है न कि वर्ष में केवल एक बार। दिवाली अन्धकार की समाप्ति है जिसका वास्तव में अर्थ है मन, इसके मिथ्याभिमान एवं निहित स्वार्थ की परिसमाप्ति तथा जीवन और इसके सद्गुण एवं सच्चाई के अभिनव प्रकाश का आरम्भ।

समस्त क्रियावानों को दिवाली की मंगल कामनायें।
धन और कल्याण की ज्योति माँ लक्ष्मी की जय।

अन्धकार और अशुभ का संहार करनेवाली माँ काली की जय।